International Journal of Multidisciplinary Education and Research
www.multidisciplinaryjournals.in
ISSN: 2455-4588
Received: 30-12-2022, Accepted: 14-01-2023, Published: 31-01-2023
Volume 8, Issue 1, 2023, Page No. 17-18

समाज और साहित्य का सम्बन्ध

कल्याणी
शोधार्थी, नेट जे. आर. एफ, बाबा मस्तनाथ युनिवर्सिटी, अस्थल बोहर, रोहतक, हरियाणा, भारत

सारांश
साहित्य और समाज का घनिष्ठ सम्बन्ध है। साहित्यकार समाज में रहते हुए ही अपने साहित्य का सृजन करता है। समाज के बिना साहित्यकार का कोई महत्व नही है। साहित्य और समाज एक–दूसरे के बिना अधूरे है। साहित्यकार समाज में रहता है। जो कुछ उसके आस–पास घटित होता है उसे अपनी रचनाओं में व्यक्त करता है। साहित्य के जिन व्यक्तिगत सुख–दुख, ह्रास विलास एवं सफलता–असफलता आदि का चित्रण होता है वे सब समाज से ही पनपे है। साहित्य और समाज एक–दूसरे पर आश्रित है। वे एक–दूसरे को प्रेरणा और सहायता देते है। इसलिए प्राचीन काल से मानव में साहित्य का सर्जन।

मूल शब्दः समाज और साहित्य, सम्बन्ध

समाज का अर्थ एवं परिभाषा

समाज का अर्थ दो प्रकार से लिया जाता है। एक साधारण अर्थ में और दूसरा विशिष्ट अर्थ में। साधारण अर्थ में। समाज शब्द का प्रयोग मनुष्यों के समूह के लिए किया जाता है।

समाजशास्त्र

राइट के शब्दो में – "समाज का अर्थ केवल व्यक्तियें का समूह नहीं है समूह में रहने वाले व्यक्तियों के आस–पास में जो सम्बन्ध है। उन सम्बन्धों के संगठित रूप को समाज कहते है।
समाज शास्त्र के विश्व मोह में "मानव के अपने साथियों के साथ विविध प्रकार के सम्बन्धों को समाज बताया है।"
रयूटर के अनुसार "समाज एक अमूर्त धारण है जो एक समूह के सदस्यों के बीच पाए जाने वाले पारस्परिक संबंधो की जटिलता का बोध कराती है।"
गिडिग्सं के अनुसार, "समाज एक संगठन है। औपचारिक संबंधों का योग है जिसमें सहयोग देने वाले व्यक्ति एक–दूसरे के साथ जुड़े हुए या सम्बद्ध है।"[2]
समाजशास्त्र में 'समाज शब्द का प्रयोग जनसमूह के लिए नहीं किया जाता क्योंकि समाजशास्त्र में समाज का स्वरूप अमूर्त स्वीकार किया गया है।
जनसमूह के लिए समाजशास्त्र में एक समाज, समुदाय अथवा समिति जैसे शब्द प्रचलित है। जो समाज शब्द से नितान्त भिन्न अर्थ है।

समाज का स्वरूप

समाज सामान्य शब्द है और इसका प्रयोग विस्तृत अर्थों में होता है जबकि 'समाज' विशिष्ट शब्द हैं और सीमित है। समाज सम्बन्धों का जाल है। अतः अमूर्त है जबकि समाज व्यक्तियों का समूह है। अतः मूर्त है। समाज की कोई सीमा नही है। समाज के विषय में रयूटर का कथन है। 'एक समाज' समाज से बिल्कुल भिन्न एक ऐसा संगठन है। जिसके द्वारा लोग अपना सामान्य जीवन व्यतीत करते है।
राजेंद्र यादव के अनुसार, "सम्बन्ध ही वह कड़ी है। जो व्यक्ति और समाज के अस्तित्व का विकास और प्रगति को सार्थक करता है, जहाँ यह सम्बन्ध बिगड़ा भी दोनों एक–दूसरे को फाड़ खाने को दौडे। प्रतिदिन परिवर्तित होते व्यक्ति और समाज के सम्बन्ध को यह कड़ी ही आज गड़बड़ा रही है।"[3]

समाज और साहित्य का सम्बन्ध

समाज और साहित्य एक दूसरे के पूरक है। आदिकाल से लेकर आज तक एक–दूसरे की परिभाषाएं दी गई है।
मुंशी प्रेमचन्द के विचार में साहित्य की परिभाषा जीवन की आलोचना है।
"चाहे वह निबंध के रूप में हो चाहे कहानियों के या कथा के। उसे हमारे जीवन की आलोचना और व्याख्या करनी चाहिए।"[4]
साहित्य का उद्देश्य समाज का ही हित करना है। साहित्यकार अपने युग का प्रतिनिधि होता है। वह सामान्य मनुष्य की अपेक्षा अधिक संवेदनशील होता है साहित्यकार अपने युग की समस्याओं अवधारणाओं और भावनाओं का संतुलित रूप से ग्रहण करने की उसमें अधिक क्षमता होती है।
किसी भी राष्ट्र या समाज के सांस्कृतिक स्तर का अनुमान उसके साहित्य से लगाया जा सकता है। साहित्य न केवल समाज का दर्पण होता है। बल्कि वह दीपक भी होता है। जो समाज की बुराइयों की तरफ ध्यान दिलाता है। विद्धानों ने किसी देश को बिना साहित्य के मृतक के समान माना है।
अंधकार हैं वहाँ जहाँ आदित्य नही हैं मुर्दा हैं वह देश जहाँ साहित्य नही है।
किसी देश की सभ्यता तथा संस्कृति के इतिहा को पढ़ने के लिए उसके साहित्य को ही पढ़ना पर्याप्त होता है। साहित्य का उद्देश्य समाज का ही हित करना है। साहित्यकार अपने युग का प्रतिनिधि होता है। वह सामान्य व्यक्ति की अपेक्षा अधिक संवेदनशील होता है।
'कवि या लेखक अपने समय का प्रतिनिधि होता है। उसे जैसा मानसिक खाद मिलता है। वैसी ही उसकी कृति होती है। वह अपने समय के वायुमंडल में घुमते हुए विचारों को मुखरित कर देता है।
साहित्यकार सिर्फ समाज का दर्पण है या नही दर्पण का कार्य सिर्फ जैसा है वैसा ही दिखाना होता है। साहित्यकार का कार्य समाज की बुराईयों को दिखाना नही होता है बल्कि जो समाज में चल रहा है। उसको नए रूप में पेश करना होता है समाज की अच्छाई बुराइयां आदि को अपने हिसाब से समाज के सामने रखना होता है।
कवि तुलसीदास ने अपनी रामायण में ऐसे मानदण्ड स्थापित किए है वह आज तक समाज का मार्गदर्शन कर रहे है। मैथिलीशरण गुप्ता अपने गर्भशाली अतीव और युग–पुरुर्षा का स्मरण करके यह कहने को विवश हो जाते हैं कि

"हम कौन थे, क्या हो गए है और क्या होंगे अभी
आओ विचार करें आज मिलकर ये समस्याएं सभी।"

कहने का अभिप्राय यह है कि युगीन घटना–चक्र साहित्यकार के मन और मस्तिष्क पर अमिट प्रभाव डालते है।

निष्कर्ष

साहित्य और समाज एक दूसरे के अभिन्न अंग है एक के विनाश से दूसरे का भी अंत हो जाता है। इसलिए विश्व के जिन प्राचीन समाज का आज अस्तित्व कहीं दिखाई नही देता। उसका मूल कारण वहाँ के साहितय का नष्ट–भ्रष्ट हो जाना है। अंत में कहा जा सकता है एक साहित्य समाज का प्रतिबिंब नही अपितु उन्नायक है और समाज साहित्य के लिए महत्वपूर्ण भाव भूमि है।

संदर्भ ग्रंथ

1. विश्वरेया (अनु0) समाज पृ0 25
2. वही, पृ0 26
3. राजेंद्र यादव, कहानी : स्वरूप और संवेदना, पृ0 43
4. राइट–ऐलिमैण्ट ऑफ दा सोसाइटी, पृ0 21
5. तालकट पार्सन– एन साइक्लोपीडिया ऑफ सोशल सांइसिस – वल्यूम
6. इ. बी. रयूटर– ए सोसाइटी एस डिस्टिक्ट फ्रॉम सोसाइटी इज ऑनली आर्गेनाइजेशन बाई मीनस एट विच कैटी आन लाइफ, पृ0 157
7. प्रेमचन्द्र, कुछ विचार–साहित्य का उद्देश्य, पृ0 3
8. विजयेंद्र स्नातक, विचार के क्षण, पृ0 13
9. मैथिलीशरण गुप्त, भारत–भारती, पृ0 10ें